

ऋग्वेद में निरूपित कर्म सिद्धान्त का वर्तमान में महत्व



डॉ गार्मी ओजा
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
शिक्षक—शिक्षा संकाय
नेहरु ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय)
इलाहाबाद।

ऋग्वैदिक काल के ऋषियों ने कर्म पर अत्यधिक बल दिया है। इन ऋषियों ने देवताओं को भी कर्म के द्वारा ही उच्च पद एवं प्रतिष्ठा प्राप्त करने वाला कहा है। एक मंत्र में कहा गया है कि इन्द्र महान् (वृत्रवध, मेघभेदन आदि) कर्म के द्वारा विख्यात हुआ—

‘यः कर्मभिर्महादिभः सुश्रुतोऽभूत्’ ।¹

सोम देवता को समर्पित एक मंत्र में भी उसे इन्द्र के समान अच्छे कर्मों को करने वाला कहा गया है।

‘इन्द्रो न यो महाकर्माणि चक्रिः।’²

कर्म शब्द ऋग्वेद में लगभग 50 बार विभिन्न विभिन्न व्यक्तियों में प्रयोग किया गया है। यह सुकर्म, ‘अकर्म’ आदि समस्त रूपों में भी प्रयुक्त हुआ है।³

ऋग्वेद में कर्म के अर्थ में ‘क्रतु’ शब्द का प्रयोग भी प्राप्त होता है—

यो जात एव प्रथमो मनस्वान्—

देवो देवान् क्रतुना पर्यभूषत्।’⁴

ऋग्वेद में कर्म न करने वाले व्यक्तियों की भी निन्दा की गयी है और उसे हीन और पतित बताया गया है। निम्नांकित मंत्र में अकर्मण्य व्यक्ति को दस्तु अज्ञानी नियमहीन एवं अमानुष कह कर इन्द्र देव से कह कर उसके विनाश की प्रार्थना की गयी है।

कर्म न करने वाले पर देवता क्रुद्ध हो जाते हैं। निम्नांकित मंत्र में कर्म से च्युत व्यक्ति मनु देवता (मनु अर्थात् प्रकृष्ट ज्ञानवान् परमात्मा) को सम्बोधित करता हुआ कहता है—

अभागः सन्नप परेतो अस्मि तव क्रत्वा तविषस्म प्रचेतः।

तं त्वा मन्यो अक्रतृजिहीडाहं स्वा तनूबलदेयाय मेहि।।⁵

मैंने कर्म से च्युत होकर आपको क्रुद्ध कर दिया है, अतः मैं शत्रु से अभिभूत होकर असहाय रह गया हूँ। अब कृपया आप मुझे बल प्रदान करने के लिए प्राप्त होइये।

ऋग्वेद में पापियों के प्रति घृणा तथा विनाश की भावना प्राप्त होती है। अग्नि देवता को सम्बोधित एक मंत्र में ऋषि द्वारा कहा गया है कि “हे देव, उस दुष्कृत को अपनी जिहवा द्वारा हमसे दूर कर दो मरणधर्मा हमें मारना चाहता है—

‘त्वं तं देव जिहवया परिबाधस्व दुष्कृतम्।

मर्ता यो नो जिधांसति ॥६॥

ऋग्वेद में पाप कर्म करने वाले के परिणामों का उल्लेख भी प्राप्त होता है। वैदिक मंत्रों में अच्छे कर्म करने वालों के लिए अन्न, द्रव्य, पुत्रादि को समृद्धि एवं सुख का विधान है तथा दुष्कर्म करने वालों के लिए नरक की प्राप्ति एवं वर्तमान जीवन कष्टों से पूर्ण होने का भी उल्लेख किया गया है। पर्जन्य देव को समर्पित एक सूक्त में कहा गया है—

‘उतानागा ईषते वृष्ण्यावतो यत्

पर्जन्यः स्तनयन् हन्ति दुष्कृतः ॥७॥

इन्द्रासोमौ को सम्बोधित एक मंत्र में कहा गया है कि तुम दुष्कर्म करने वालों के लिए सुखप्रद न होओ ॥८॥

एक संवाद में इंद्राणी स्वयं कहती है—

‘न सुगं दुष्कृते भूवम् ॥९॥

(अर्थात् दुष्कृत व्यक्ति के लिए मैं सुखप्रद नहीं होती हूँ।)

ऋग्वेद में सुकृत अर्थात् अच्छे कर्म करने वालों की महिमा का वर्णन पर्याप्त रूप में उपलब्ध होता है। सूक्तों में देवताओं के लिए प्रायः ‘सुकृतः’ “सुकृतुः” विशेषण किया गया है। यथा—

दिवो नपाता सुकृते शुचिव्रता ॥ ३० १ / १८२ / १

निषसाद धृतं वरुणः पस्त्यास्वा ।

साप्राज्याय सुकृतुः ॥ १ / २५ / १०

सुकृतः सुपाणिः स्वधां ऋतावा ॥ ३ / ५४ / १२

देवताओं के अतिरिक्त पितरो के लिए भी “सुकृतः” विशेषण प्रयुक्त हुआ है, जैसे—

यत्रास्ते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्र

त्वा देवः सविता दधातु ॥ ३० १० / १७ / ४

ऋग्वेद के ऋषि इस तथ्य को स्पष्ट रूप से जानते थे कि पुण्य कर्म करने से मनुष्य समृद्धि प्राप्त करता है तथा अच्छे कर्म लोक कल्याण का आधार है। सोमन देवता को समर्पित एक सूक्त में कहा गया है कि वह हवि प्रदान करने वाले यजमान को दुधारू गौ, वेगवान् धोड़े तथा कर्मठ वीर, गृहकार्य कुशल यज्ञपरायण, सभा एवं पिता का यश बढ़ाने वाले पुत्र प्रदान करता है—

सोमो धेनुं सोमो अर्वन्तमाशुं,

सोमो वीरं कर्मण्य ददाति ।

सादन्यं विदथ्यं सभेये,
पितृश्रवणं यो ददाशदस्मै ॥¹¹

इसी प्रकार का भाव अश्विनीकुमारों को समर्पित एक मंत्र में कहा गया है, यथा—
इषं प्रज्ञचन्ता सुकृते सुदानवे आ बर्हिः सीदतं नरा ॥¹²

इसी प्रकार ऋग्वेद में उषाओं को भी सुकर्मा तथा सुदानी व्यक्ति के लिए अन्न धारण करने वाली कहा गया है—

‘इषं वहन्ती सुकृते सुदानवे ॥’¹³

वस्तुतः ऋग्वेद में मानव जीवन को सुकर्मा का क्षेत्र माना गया है। एक सूकृत में विवाह के समय वधू को ऋत की योनि और सुकृत के लोक में पति के साथ स्थापित किया गया है यथा—

प्र त्वामुञ्चामि वर्णस्य पाशाद्
येन त्वाबध्नात् सविता सुशेवः ।
ऋतस्य योनौ सुकृतस्य लोकेऽ—
रिष्टां त्वां सह पत्या दधामि ॥¹⁴

उपर्युक्त ऋग्वेद के मंत्रों में उल्लिखित सुकृत एवं दुष्कृत के फल का वर्णन कर्मवाद के सिद्धान्त का स्पष्टतः प्रतिपादन करता है।

ऋग्वेद में पुण्य कर्म करने वाले “सुकृतौ” की ‘सुकृत्तर’ तथा “सुकृत्तम्” श्रेणियों का भी उल्लेख प्राप्त होता है।

‘इन्द्राय विष्णुः सुकृते सुकृत्तरः ॥’¹⁵

इन्द्र तथा विष्णु को कहा गया है कि वे सदैव मधु (अर्थात् सम्पूर्ण सुखों) का भोग प्राप्त करते हैं—

‘सुकृत्तमा मधुनो भक्षमाशत् ॥’¹⁶

ऋग्वेद में उत्तम, मध्यम, अधम तीनों प्रकार के स्वर्गों का वर्णन भी प्राप्त होता है। इन उपर्युक्त तीन प्रकार के स्वर्गों की प्राप्त क्रमशः सामान्य पुण्यात्मा जन उनसे श्रेष्ठ कर्म करने वाले ‘सुकृत्तर’ तथा सर्वश्रेष्ठ पुण्यात्मा जनों को होती है जो अपनी तपस्या में सर्वश्रेष्ठ होते हैं।

ऋग्वेद में कर्म के फल की प्राप्ति के सम्बन्ध में ऋषियों की मान्यता थी कि वह इस लोक में तथा मरणोपरान्त परलोक में दोनों ही जगह प्राप्त हो सकता है।

प्रथम मण्डल के 31वें सूक्त के मन्त्र संख्या 7 में अग्निदेव को सम्बोधित करके कहा गया है कि हे अग्निदेव! तुम प्रतिदिन अपनी सेवा अर्थात् यज्ञ कराने वाले भक्त को मरणरहित पद देते हो (अर्थात् परलोक में) तथा (इस लोक में) प्रचुर अन्नादि प्रदान करते हो।

अन्त्येष्टि सूक्त में मृतक को सम्बोधित करके कहा गया है कि तुम अपने द्वारा किये गये इष्टापूर्त कर्मों के फलस्वरूप सर्वोच्च स्वर्ग में पितरों तथा यम के साथ संगत होते हैं।¹⁷

ऋग्वेद के मन्त्रों में कहा गया है कि मैं बिना फल भोग के नष्ट नहीं होते तथा उनका अस्तित्व वर्तमान जीवन तथा भूतकाल दोनों में ही बना रहता है।¹⁸

एक मंत्र में इन्द्र ने स्वयं कहा है कि भूतकाल में किये गये तथा भविष्य में किये जाने वाले कर्मों के द्वारा लोग मुझे ही प्राप्त होते हैं।

मामार्यन्ति कृतेन कर्त्वन च।¹⁹

उपर्युक्त सन्दर्भों में हमें संचित, क्रियमाण तथा प्रारब्ध कर्मों के संकेत स्पष्टतः दृष्टिगोचर होते हैं।

ऋग्वेद में ऋषिओं का ऐसा मत था कि देवताओं के प्रति विनयपूर्वक की गयी स्तुति तथा यज्ञ करने आदि के द्वारा पापकर्मों के फल भोग से मुक्ति हो जाती है। ऋग्वेद में वरुण देवता का वही स्थान है जो राजा के यहाँ पापियों को दण्ड देने वाले राजा का होता है। न्यायदर्शन तथा पुराणों में उसे साक्षात् ईश्वर का स्वरूप कहना युक्ति—युक्त होगा। यथा—

यच्चिद्दि ते विशो यथा प्र देव वरुणव्रतम्।

मिनीमसि द्यवि द्यवि ॥

मा नो वधाय हत्ये जिहीद्रानस्य रीरथः।

मा हृणानस्य मन्यवे ॥²⁰

(हे वरुण देव प्रजाजनों की भाँति हम आपके नियमों का कुछन कुछ प्रतिदिन ही प्रमादवश उल्लंघन किया करते हैं, अतः आप हमारी उपेक्षापूर्वक अपना घातक प्रहार हम पर न करें तथा हमें अपने क्रोध का विषय न बनावें।)

इसी प्रकार पापी की मुक्ति की प्रार्थना से सम्बद्ध कतिपय मन्त्र दृष्टिगोचर किये हो रहे हैं—

यत् किं चेदं वरुण दैव्ये जनेऽभिद्रोहं मनुष्यश्चरामसि।

अचिन्ती, यत्तव धर्मा थ्योपिम मा नस्तस्मादेवसो देव रीरिषः ॥²¹

(हे वरुण, हम सब मनुष्यों ने देवताओं के प्रति जो कुछ अपराध किया है तथा अज्ञानवश आपके नियमों का उल्लंघन किया है उस पाप के कारण हे देव हमें न मारिये।)

अव द्रुग्धानि पित्र्या सृजा—

नोऽव या वयं चकृमा तनूभिः ॥²²

(हे वरुण आप हमारे पैतृक पापों को क्षमा कर दो तथा हमसे जो अपराध अपने शरीर से किये हैं, उनसे भी हमें मुक्त कर दो।)

हे वरुण हमने अपनी प्रेमी, मित्र, सखा, भाई, नित्य समीप में रहने वाले पड़ोसी अथवा किसी अनजाने व्यक्ति के प्रति जो कुछ पाप किया हो उसे आप नष्ट कर दीजिये अर्थात् क्षमा कर दीजिये।

इस प्रकार ऋग्वेद में कर्म का महत्त्व स्पष्टतयः प्रतिपादित किया गया है।

निष्कर्ष—

इसी प्रकार कोई मनुष्य जन्म जन्मान्तरों में जिस प्रकार के विचारों को ग्रहण करता रता है उसके संस्कार उसी प्रकार के कर्मों में स्थाई हो जाते हैं अतः अगले जीवन में भी वह उसी प्रकार के कार्यों, भावों तथा विचारों में उसकी रुचि एवं प्रवृत्ति होती है उसकी इसी प्रवृत्ति अथवा प्रकृति के प्रकार की “स्वभाव” संज्ञा है।

जिस व्यक्ति के पूर्व जन्म में शांत स्वभाव के साधु एवं विद्वान् यथा लाभ संतुष्ट रहने वाले तपस्ची दयालु परोपकारी सात्त्विक भोजन करने वाले महात्माओं के सत्त्वंग में बीते हैं, वह जन्म से ही शांत स्वभाव वाला सज्जन, सात्त्विक गुणों वाला एवं तादृश कार्यों में लीन रहने वाला दिखाई देता है। इसके विपरीत जिसका पूर्वजन्म मूर्खों, क्रूर, क्रोधी, हिंसकों, अभक्ष्यभोगियों के सम्पर्क में बीते हैं, वह इस जन्म में भी एतादृश कार्यों में लीन रहने वाला तामसी व्यक्ति होता है।

इसी प्रकार जिसके पूर्वजन्म कामादि, वासनाओं के दास दम्भी, अभिमानी, अहंकारी, लालची, चंचल स्वभाव वाले अत्यन्त खट्टे तीक्ष्ण, कामवर्धक भोजनों में लिप्त प्रकृति के लोगों में बीतते हैं वे वैसे ही रजोगुण भूयिष्ठ संस्कार लेकर जन्म लेते हैं।²⁴

अतः ऋग्वेद में निहित कर्मों के सिद्धान्त का वर्तमान समय में प्रासंगिकता इसी आधार पर देखी जा सकती है जिस प्रकार लोगों किसी भी घटना घटित होने पर कहा जाता है कि यह पिछले जन्म के कर्मों का फल है।

सन्दर्भ सूची

1. ऋ० 3/36/1
2. ऋ० 9/88/4
3. निरुक्त 10/10
4. ऋ० 2/12/1 तथा द्र० 1/12/1, 1/91/2, सायण भाष्य
5. ऋ० 10/83/5
6. ऋ० 6/16/32
7. ऋ० 5/83/2
8. “इन्द्र सोमा दुष्कृते मा सुर्ग भूत्” — ऋ० 7/104/7
9. ऋ० 10/86/5
10. “ऋतस्य पन्था” न तरन्ति दुष्कृत ।”— ऋ० 9/73/6
11. ऋ० 1/91/20
12. ऋ० 1/47/8
13. ऋ० 1/92/3

14. ઋ૦ 10 / 85 / 24
15. ઋ૦ 1 / 156 / 5
16. ઋ૦ 9 / 83 / 4
17. ઋ૦ 10 / 14 / 8
18. ઋ૦ 1 / 117 / 4
19. ઋ૦ 10 / 48 / 3
20. ઋ૦ 1 / 25 / 12
21. ઋ૦ 7 / 89 / 5
22. શ્રીમદ્ભગવદગીતા—17 / 2, 3